समाज विकासमाला

गांव सुखी, हम सुखी

सस्ता साहित्य मण्डल प्रकाशन

समाज-विकास-माला : ११

गांव सुखी, हम सुखी

लेखक
विनोबा

संपादक
यशपाल जैन

१९५८
सस्ता साहित्य मंडल-प्रकाशन

प्रकाशक
मार्तण्ड उपाध्याय
मंत्री, सस्ता साहित्य मंडल
नई दिल्ली

पांचवीं बार : १९५८
मूल्य
सैंतीस नये पैसे

मुद्रक
हिंदी प्रिंटिंग प्रेस,
दिल्ली

समाज-विकास-माला

हमारे देश के सामने आज सबसे बड़ी समस्या करोड़ों आदमियों की शिक्षा की है। इस दिशा में सरकार की ओर से यदि कुछ कोशिश हो रही है तो वही काफी नहीं है। यह बड़ा काम सबकी सहायता के बिना पार नहीं पड़ सकेगा।

बालकों तथा प्रौढ़ों की पढ़ाई की तरफ जबसे ध्यान गया है, ऐसी किताबों की मांग बढ़ गई है, जो बहुत ही आसान हों, जिनके विषय रोचक हों, जिनकी भाषा मुहावरेदार और बोलचाल की हो और जो मोटे टाइप में बढ़िया छपी हों।

यह पुस्तक-माला इन्हीं बातों को सामने रखकर निकाली गई है। इसमें कई पुस्तकें निकल चुकी हैं। इन सबकी भाषा बड़ी आसान है। विषयों का चुनाव बड़ी सावधानी से किया गया है। छपाई-सफाई के बारे में विशेष ध्यान रखा गया है। हर किताब में चित्र भी देने की कोशिश की है।

यदि पुस्तकों की भाषा, शैली, विषय और छपाई में किसी सुधार की गुंजाइश मालूम हो तो उसकी सूचना निस्संकोच देने की कृपा करें।

पांचवां संस्करण

बड़े हर्ष की बात है कि इस पुस्तक का पांचवां संस्करण इतनी जल्दी प्रकाशित हो रहा है। इस माला की सभी पुस्तकें पाठकों को पसंद आ रही हैं, इससे हमें बड़ा आनंद होता है। हमें विश्वास है कि इन सामयिक और उपयोगी पुस्तकों को पाठक चाव से पढ़ेंगे और इनके प्रचार में हाथ बटायेंगे।

—मंत्री

पाठकों से

इस किताब में विनोबाजी ने बताया है कि हमारे गांव कैसे सुखी हो सकते हैं। आप जानते ही हैं कि हमारे देश के ज्यादातर लोग गांवों में रहते हैं। इसलिए गांव सुखी होंगे तो हम सब सुखी होंगे।

विनोबाजी चाहते हैं कि गांव के लोग कम खर्च करें, अपने पैरों पर खड़े हों, अपने काम की चीजें अपने-आप पैदा कर लें और अपने झगड़े आपस में मिल-जुलकर निबटा लें। यही बातें उन्होंने इस पुस्तक में समझाई हैं।

विनोबाजी हमेशा से गांव में रहे हैं और गांवों को अच्छी तरह से जानते-पहचानते हैं। उन्होंने जो बातें बताई हैं, वे बड़े काम की हैं। उनको सामने रखकर काम किया जाय तो सचमुच हमारे उजड़े गांव फिर लहलहा उठेंगे। गांव लहलहायेंगे तो देश भी चमक उठेगा

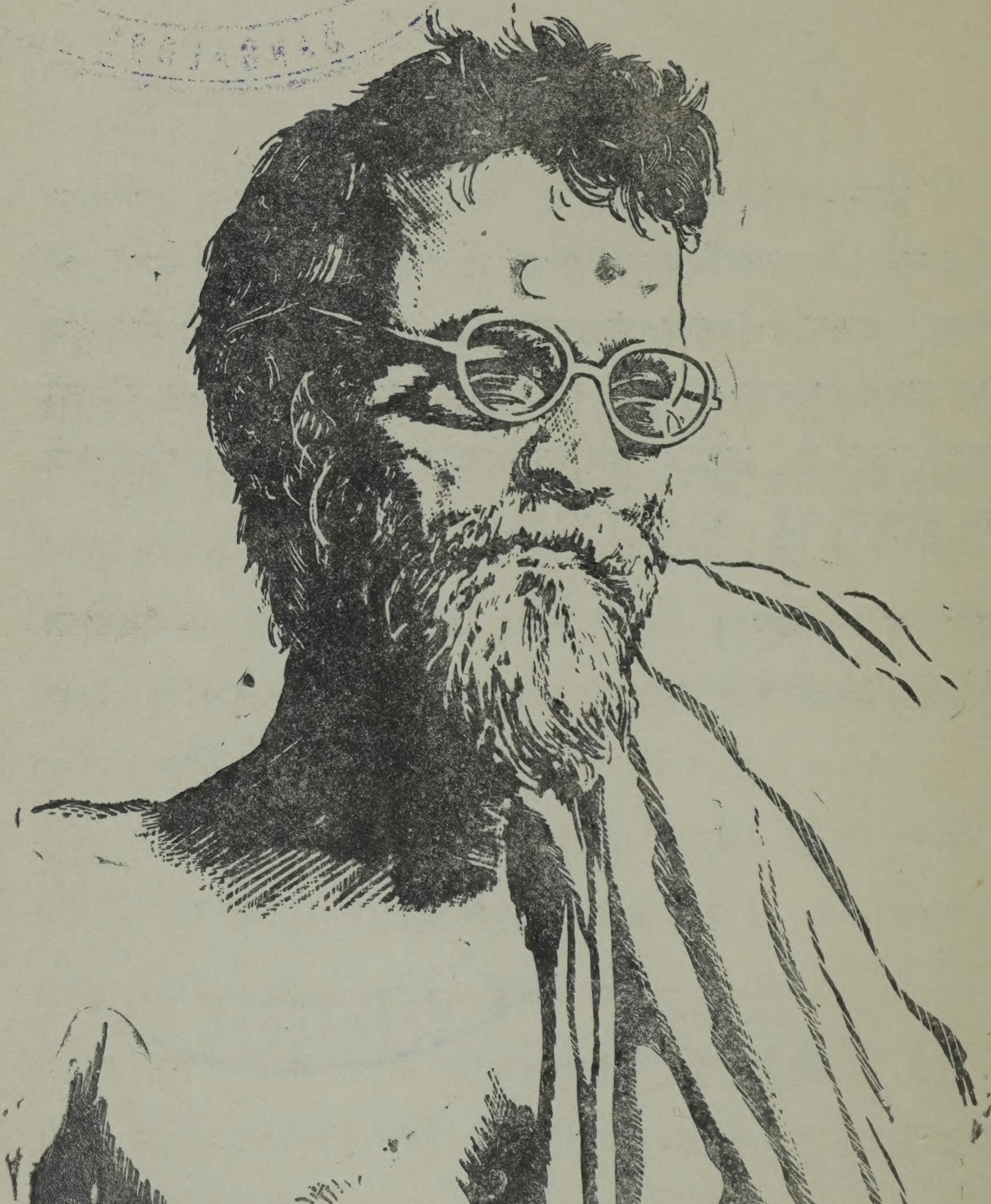
आप इस किताब को अच्छी तरह पढ़ें और दूसरों को भी पढ़वायें।

—संपादक

दो शब्द

'ग्राम-लक्ष्मी की उपासना' यह मेरा एक पुराना व्याख्यान है। वही 'समाज-विकास-माला' में 'गांव सुखी, हम सुखी' के नाम से प्रकाशित किया जा रहा है। व्याख्यान पुराना होते हुए भी उसके विचार आज भी ताजे हैं। उसमें ग्राम-जीवन की जो दशा बताई है, उसीसे 'सर्वोदय-समाज' बन सकेगा और 'सर्वे नः सुखिनः संतु', यह संतों की वासना पूरी होगी।

पड़ाव चंडी (बिहार) **—विनोबा**
२० जनवरी, १९५४



लेखक

गांव सुखी, हम सुखी

: १ :

हमारा यह देश बहुत बड़ा है। इसमें सात लाख देहात हैं। हमारे देश में शहर बहुत थोड़े हैं। अगर औसत निकाला जाय तो दस में एक आदमी शहर में रहता है और नौ देहात में रहते हैं। पैंतीस करोड़ लोगों में से ज्यादा-से-ज्यादा चार करोड़ शहरों में रहते हैं, इकतीस करोड़ देहात में। लेकिन इन इकतीस करोड़ का ध्यान शहरों की तरफ लगा रहता है। पहले ऐसा नहीं था। देहात मुहताज होकर शहरों का मुंह नहीं ताकते थे, लेकिन आज सारी हालत बदल गई है।

आज किसान के दो ईश्वर हो गये हैं। आजतक एक ही ईश्वर था। किसान आकाश की तरफ, पानी बरसानेवाले ईश्वर की तरफ, देखता था। लेकिन आज चीजों के भाव ठहरानेवाले देवता की तरफ देखना प ता है। इसीको आस्मानी-सुलतानी कहते हैं। आस्मान भी रक्षा करे और सुलतान भी रक्षा करे।

परमात्मा खूब फसल दे और शहर भरपूर भाव दे। इस तरह इन देवताओं को—एक आकाश का और दूसरा अमरीका का—किसान को पूजना पड़ता है। लेकिन ऐसे दो-दो भगवान काम नहीं आयंगे। गांधी कहते हैं, ऊपरवाले ईश्वर को बनाये रखो और इस दूसरे देवता को छोड़ो। एक ही ईश्वर काफी है।

अब इस दूसरे देवता की, याने शहरिये भगवान की, भक्ति से छुटकारा पाने का उपाय मैं तुम लोगों को बतलाता हूं। हमारे गांव की सारी लक्ष्मी यहां से उठकर शहरों में चली जाती है। अपने पीहर से चल बसती है। इस ग्राम-लक्ष्मी के पैर गांव में नहीं ठहरते। वह शहर की तरफ दौड़ती है। पहाड़ पर पानी भरपूर बरसता है, लेकिन वह वहां कब ठहरता है? वह चारों तरफ भाग निकलता है। पहाड़ बेचारा कोरा-का-कोरा, नंग-धड़ंग, गंजा-बूचा, खड़ा-का-खड़ा रह जाता है। देहात की लक्ष्मी इसी तरह चारों दिशाओं में भाग खड़ी होती है। शहरों की तरफ बेतहाशा दौड़ती है। अगर हम उसे रोक सकें तो हमारे गांव सुखी होंगे।

यह देहाती लक्ष्मी कौन-कौन-से रास्तों से भागती

है, सो देखो। उन रास्तों को बंद कर दो। तब वह रुकी रहेगी।



देहाती लक्ष्मी जिन रास्तों से भागती है, उन्हें बंद कर दो।

उसके भागने का पहला रास्ता बाजार है, दूसरा शादी-ब्याह, तीसरा साहूकार, चौथा सरकार और पांचवां व्यसन। इन पांचों रास्तों को बंद करना शुरू करें।

: २ :

सबसे पहले ब्याह-शादी की बात लीजिए। तुम लोग ब्याह-शादी में कोई कम पैसा खर्च नहीं करते। उसके

लिए कर्ज भी करते हो। लड़की बड़ी हो जाती है, अपने ससुराल में जाकर गिरस्ती चलाने लगती है। लेकिन शादी के कर्ज से उसके मां-बाप नहीं छूटते। यह रास्ता कैसे मूंदा जाय, सो बताता हूं। तुम कहोगे, "खर्च में कतर-ब्योंत करो। भोज न दो, समारोह की क्या जरूरत है?" आदि-आदि। यह ठीक नहीं। समारोह खूब करो। ठाट-बाट में कमी नहीं होनी चाहिए। लेकिन मैं अपने तरीके से कम खर्च में पहले से भी ज्यादा ठाट-बाट तुम्हें देता हूं।

लड़के-लड़की की शादी मां-बाप ठीक करें। लेकिन वहां उनका काम खत्म हो जाना चाहिए। शादी करना, समारोह करना, यह सारा काम गांव का होगा। मां-बाप शादी में एक पाई खर्च नहीं करेंगे। जो करेंगे उनपर जुर्माना होगा, ऐसा कायदा गांववालों को बना लेना चाहिए।

लड़के जितने अपने मां-बाप के हैं, उतने ही समाज के भी हैं। मां-बाप के मर जाने पर क्या वे घूरे पर फेंक दिये जाते हैं? गांव उन्हें संभालता है, मदद करता है। शादी भी करेगा। आप इस रास्ते पर जाकर देखिए।

प्रयोग कीजिए। साहूकार का ऋण कम होता है या नहीं, देखिए। आपका कर्ज घटेगा। झगड़े कम होंगे। सहयोग और आत्मीयता बढ़ेगी।

: ३ :

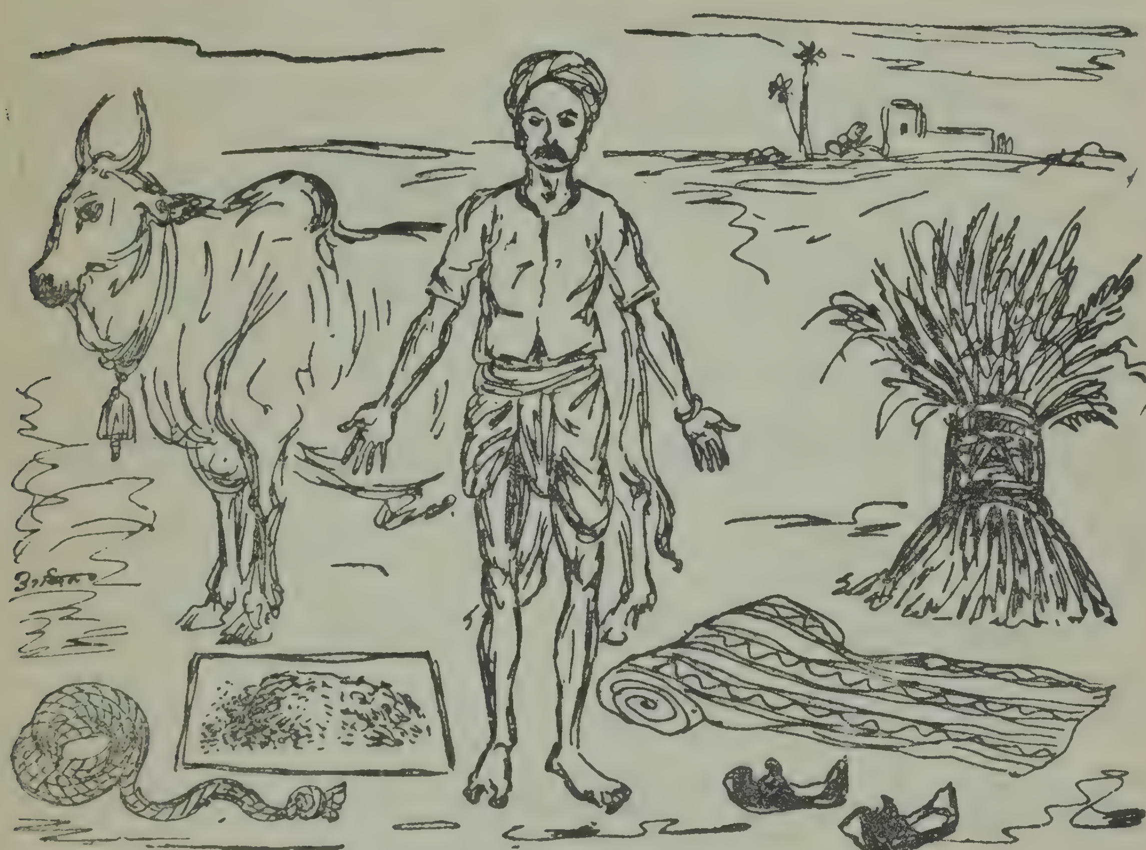
दूसरा रास्ता बाजार का है। तुम देहाती लोग कपास बोते हो, लेकिन सारा-का-सारा बेच देते हो। फिर बुवाई के समय बिनौले शहर से मोल लाते हो, कपास यहां पैदा करते हो। उसे बाहर बेचकर बाहर से कपड़ा खरीद लाते हो। गन्ना यहां पैदा करते हो। उसे बेचकर शक्कर बाहर से लाते हो। गांव में मूंगफली, तिल्ली और अलसी होती है। लेकिन तेल शहर की तेल-मिल से लाते हो। अब इतना ही बाकी रह गया है कि यहां से अनाज भेजकर रोटियां बंबई से मंगाओ। तुम्हें तो बैल भी बाहर से लाने पड़ते हैं। इस तरह सारी चीज बाहर से लाओगे तो कैसे पार पाओगे?

बाजार में क्यों जाना पड़ता है? जिन चीजों की जरूरत होती है, उन्हें भरसक गांव में ही बनाने का निश्चय करो। स्वराज्य माने स्वदेश का राज्य, अपने

गांव का राज्य। घर जाने पर तुम लोग सोचो कि अपने गांव में क्या-क्या बना सकते हो। देखो, तुम्हें कौन-कौन-सी चीजें चाहिए। तुम्हारी खेती के लिए बढ़िया बैल चाहिए। उन्हें मोल कहांतक लोगे? तुम्हें बढ़िया बैल यहीं गांव में पैदा करने चाहिए। गायों का अच्छी तरह पालन करो। एक-दो बढ़िया सांड उनमें रखो। बाकी के सबको बधिया करो। इससे गायों की नसल सुधरेगी। अच्छे बैल मिलेंगे। बैलों के लिए नथनी वगैरा चाहिए। गांव के सन, पटुआ वगैरा से यहीं बना लो। तुम्हें कपड़े की जरूरत है, उसे भी यहीं बनाना चाहिए। गांव में बुनकर न हो तो दो लड़कों को सिखा लाओ। हरेक को अपने घर में कातना चाहिए। उतना समय जरूर मिल जायगा। मूंगफली गांव में ही होती है। यहीं घानी शुरू करो तो यहीं ताजा तेल मिलेगा। गन्ना गांव में होता है। उसका गुड़ बनाओ। शक्कर की बिल्कुल जरूरत नहीं है। गुड़ गरम होता है, लेकिन पानी में मिलाने से ठंडा हो जाता है। गुड़ में तंदुरुस्ती के लिए पोषक चीजें हैं। गुड़ बनाओ। खोई जलाने के काम आयगी। गांव के चमार से ही जूते बनवाओ। इस तरह गांव में ही सारी चीजें बनानी चाहिए। पुराने जमाने में हमारे

गांव अपने पैरों पर खड़े थे। उन्हें सच्चा स्वराज्य प्राप्त था।

गांव का ही अनाज, गांव का ही कपड़ा, गांव का ही गुड़, गांव का ही तेल, गांव के ही जूते, गांव के ही ढोर, गांव के ही बैल, गांव का ही घर का पिसा आटा—इस



गांव में ही सब चीजें पैदा करो, देखो गांव कैसे लहलहाते हैं।

रवैये को अपनाओ। फिर देखो, तुम्हारे गांव कैसे लह-लहाते हैं? तुम कहोगे, "यह महंगा पड़ेगा।" नहीं, यह केवल कल्पना है। मैं एक उदाहरण देकर समझाता

हूं। मान लो, तुम्हारे गांव में एक रंगरेज है, एक बुनकर है, एक तेली है, एक चमार है। आज चमार क्या कहता है? वह कहता है, "मैं तेली से तेल नहीं लूंगा। वह महंगा पड़ता है।" तेली क्या कहता है?—"गांव के चमार का बनाया हुआ जूता महंगा है। मैं शहर में जूता खरीदूंगा।" बुनकर कहता है, "मैं गांव का सूत नहीं लूंगा। पुतलीघर का अच्छा होता है।" किसान कहता है, "मैं बुनकर का कपड़ा नहीं लूंगा। मिल का लूंगा। वह सस्ता होता है।" इस तरह आज हमने एक-दूसरे को मारने का धंधा शुरू किया है। एक-दूसरे को निबाह लेना धर्म है। उसे छोड़कर हम एक-दूसरे को मटिया-मेट कर रहे हैं।

लेकिन जरा मजा देखिए। तेली चार आने ज्यादा देकर चमार से महंगा जूता खरीदता है। उसके जेब से आज चार आने गये। आगे चलकर वह चमार तेली से चार आने ज्यादा देकर महंगा तेल खरीदता है। याने उसके चार आने लौट आते हैं, अर्थात वह महंगा नहीं पड़ता। जहां आपसी व्यवहार होता है वहां 'महंगा' जैसा कोई शब्द ही नहीं है। गये हुए पैसे दूसरे रास्ते से लौट आते हैं। मैं उसकी महंगी चीज खरीदता हूं, वह मेरी

महंगी चीज खरीदता है। हिसाब बराबर। इसमें क्या बिगड़ता है। जुलाहे ने खादी बनाई और तेली ने वह खरीद ली। तेली के लिए खादी महंगी है, जुलाहे के लिए तेल महंगा है। बात एक ही है। तेल में जो पैसे गये, वे खादी में वापस मिले, और खादी में गये सो तेल में मिल गये। 'इस हाथ देना, उस हाथ लेना' इस तरह के भाईचारे और सहयोग का व्यवहार पहले होता था, लेकिन आज वह लोप हो गया है।

: ४ :

देहात में प्रेम होता है, भाईचारा होता है। देहात के लोग अगर एक-दूसरे की जरूरतों का खयाल नहीं करेंगे तो वह देहात ही नहीं है। वह तो शहर के जैसा हो जायगा। शहर में कोई किसीको नहीं पूछता। सभी अपने-अपने मतलब के लिए वहां इकट्ठे होते हैं, जैसे गोबर का ढेर देखकर सैकड़ों कीड़े जमा होते हैं। उस सड़नेवाले गोबर में सैकड़ों कीड़े कुलबुलाते हैं। वे कीड़ें वहां क्यों इकट्ठे हुए? किसी कीड़े से पूछो, "यहां क्यों आया? तेरे कोई भाई-बहन यहां है?" वह कीड़ा कहेगा, "मैं गोबर खाने के लिए यहां आया हूं और गोबर खाने में चूर

हूं । मुझे ज्यादा बोलने की फुरसत नहीं है ।" कलाकंद, गुड़ आदि पर मक्खियां बैठती हैं, सो क्या प्रेम के कारण ? उसी तरह शहरों में मक्खियों के समान जो आदमी भिनभिनाते रहते हैं, चीटियों की तरह जिनका तांता लगा रहता है, वह क्या प्रेम के लिए ? शहर में स्वार्थ और लोभ हैं, गांव प्रेम से बनता है। गांव में आग लग जाय तो सब लोग अपना-अपना काम छोड़कर दौड़ आयंगे । घर में कोई बैठा थोड़े ही रहेगा । लेकिन बंबई में क्या दशा होगी ? सब कोई कहेंगे, "पानी का बंबा जायगा । मुझे अपना काम है।" इसलिए एक कवि ने कहा है, "गांवों को ईश्वर बनाता है और शहरों को मनुष्य ।"

हमारे बाप-दादा गांवों में रहते थे । आज तो हर-कोई शहर में जाता है । वहां क्या धरा है ? पीले पत्थर हैं और धूल है । असली लक्ष्मी देहात में है। पेड़ों में फल लगते हैं । खेतों में गेहूं होता है, गन्ना होता है। यही सच्ची लक्ष्मी है । यह सच्ची लक्ष्मी बेचकर सफेद या पीले पत्थर मत लो । तुम शहर जाकर वहां से सस्ती चीजें लाते हो । लेकिन सभी ऐसा करने लगें तो देहात वीरान दिखाई देंगे । अगर देहातों को सुखी देखना है तो शहर

के बाजार को छोड़ो। गांव की चीजें खरीदो। जो चीज गांव में बन ही न सकती हो, वह अलबत्ते बाहर से लाओ। बाहर से लाने में भी, अगर वह दूसरे गांव में होती हो, तो वहां से लाओ। मान लो यहां चूड़ियां नहीं होतीं तो सोनगीर से लाओ। यहां अच्छे लोटे नहीं बनते तो सोनगीर से लो। यहां रंगरेज न हो तो मालपुर से रंगवाकर मंगाओ। मालपुर का रंगरेज तुम्हारे यहां से गुड़ लेकर जायगा, तुम उसके यहां से कपड़े रंगवाओ। तुम्हारे गांव में जो चीजें न बनती हों, उनके लिए दूसरे गांव खोजो। शहर में कोई चीज खरीदने जाओ तो पहले यह सवाल पूछो कि क्या यह चीज देहात में बनी है? हाथ की बनी हुई है? पहले उन चीजों को पसंद करो। जहां-तक हो सके, मशीन से बना हुआ शहर का माल मत लो।

तुम्हारी ग्राम-पंचायतों को यह काम अपने जिम्मे लेना चाहिए। गांव के झगड़े-टंटे दूर करने का काम तो पंचायतों का है ही; लेकिन गांव से कौन-कौन-सी चीजें बाहर जाती हैं, कौन-कौन-सी बाहर से आती हैं, इसका ध्यान भी पंचायत को रखना चाहिए। नाका बनाकर फेहरिस्त बनानी चाहिए। बाद में, वे चीजें

बाहर से क्यों आती हैं, इसकी जांच-पड़ताल करके उन्हें गांव में ही बनवाने की कोशिश करनी चाहिए। अगर बुनकर नहीं है तो दूसरे गांव को दो लड़के सीखने के लिए भेज देंगे। हरेक को यह संकल्प कर लेना चाहिए कि गांव की ही चीज खरीदूंगा। जो चीज मेरे गांव में न बनती हो, उसे वहीं बनवाने की कोशिश करूंगा। गांव के नेताओं को इसकी तरफ ध्यान देना चाहिए। यह मत कहो कि कैसे होगा ? क्या होगा ? काम शुरू कर दो। चट-से सब हो जायगा। फिर तुम ही चीजों के दाम ठहराओगे। तेली तेल किस भाव बेचे, चमार जूता कितने में बना दे, बुनकर की बुनाई क्या हो, सबकुछ तुम तय करोगे। जब सभी एक-दूसरे की चीजें खरीदने लगेंगे तो सब सस्ता-ही-सस्ता होगा। 'सस्ता' और 'महंगा' ये शब्द ही नहीं रहेंगे।

बतलाओ, तुम्हारे यहां क्या-क्या नहीं हो सकता ? एक, नमक नहीं हो सकता। ठीक, नमक लाओ बाजार से। दो, मिट्टी का तेल। मिट्टी के तेल की तो जरूरत ही नहीं होनी चाहिए, परंतु उसके बिना काम ही न चलता हो तो खरीदो। तीसरी चीज, मसाले। मिर्च तो यहां होती ही है! दरअसल तो मिर्च भी बंद कर देनी

चाहिए। मिर्च की शरीर को जरूरत नहीं है। दियासलाई खरीदनी पड़ेगी। कुछ औजार खरीदने पड़ेंगे। दूसरा कोई चारा नहीं है। ये चीजें खरीदो। मिट्टी का तेल धीरे-धीरे कम करो। उसके बदले अंडी का तेल काम में लाओ।

इनके सिवा बाकी सारी चीजें गांव में ही बनाओ। खादी गांव में बननी चाहिए। खादी के कपड़े के लिए सूत के बटन भी यहीं बन सकते हैं। दूसरे बटनों की क्या जरूरत है? अगर छाती पर वे बटन न हों तो क्या प्राण छटपटायेंगे? ऐसी बात तो नहीं है। तो फिर उन्हें फेंक दो। कंठी की क्या जरूरत है? उसके बिना चल नहीं सकता? ऐसी अनावश्यक चीजें गांव में लाओगे तो ये कंठियां पैरों को जंजीर की तरह जकड़ेंगी या फांसी की रस्सी की तरह गला घोंट देंगी। बाहर से ऐसी कंठियां लाकर अपने शरीर को मत सजाओ। भगवान् श्रीकृष्ण कैसे सजते थे। वह क्या बाहर से कंठियां लाते थे? वृंदावन में मोरों के जो पंख गिर जाते थे, उन्हींसे वह अपना शरीर सजाते थे। पंख उखाड़कर नहीं लाते थे। मोर के पंख से सजते थे, सो क्या वह सिड़ी हो गये थे? पागल हो गये थे?

"मेरे गांव के मोर हैं, उनके पंखों से मैं अपने शरीर को सजाऊं तो कोई हर्ज नहीं है। इसमें उन मोरों की भी पूजा है"—ऐसी भावना से वह मोरमुकुट लगाते थे। और गले में क्या पहनते थे?—वनमाला। मेरी यमुना के तीर के फूल—वे सबको मिलते हैं। गरीबों को मिलते हैं। अमीरों को मिलते हैं। वह स्वदेशी वनमाला, देहात की वनमाला, गले में पहनते थे। और बजाते क्या थे? मुरली। देहात के बांस की बांसुरी—अलगोजा। यही उनका बाजा था।

हमारे एक मित्र जर्मनी गये थे। वह वहां का एक किस्सा सुनाते थे—हम सब विद्यार्थी इकट्ठे हुए थे। फ्रांसीसी, जर्मन, अंग्रेज, जापानी, रूसी, सब एक साथ बैठे थे। सबने अपने-अपने देश के राष्ट्रीय बाजे बजाकर दिखाये। फ्रांसीसीयों ने वायोलिन बजाया, अंग्रेजों ने अपना बजाया। मुझसे कहा गया कि तुम हिंदुस्तानी सुनाओ। मैं चुपचाप बैठा रहा। वे मुझसे पूछने लगे, "तुम्हारा भारतीय बाजा कौन-सा है?" मैं उन्हें नहीं बता सका।

मैंने तुरंत अपने उस मित्र से कहा, "अजी, हमारा

राष्ट्रीय बाजा बांसुरी है। लाखों गांवों में वह पाई जाती है, सीधी-सादी और मीठी। कृष्ण भगवान् ने उसे पुनीत किया है। एक बांस की नली ले ली, उसमें छेद बना लिये। बस, तैयार हो गई।"

ऐसा बाजा श्रीकृष्ण बजाते थे। वह गोकुल का स्वदेशी देहाती बाजा था। अच्छा, श्रीकृष्ण खाते क्या थे? बाहर की चीनी लाकर खाते थे? वह अपने गोकुल की मक्खन-मलाई खाते थे। दूसरों को खाना सिखाते थे। ग्वालिनें गोकुल की यह लक्ष्मी मथुरा को ले जाती थीं; परंतु गांव की इस अन्नपूर्णा को कन्हैया बाहर नहीं जाने देते थे। वह उसे लूटकर सबको बांट देते थे। सारे गोकुल के बालक उन्होंने तगड़े किये। जिन्होंने गोकुल पर चढ़ाई की, उनके दांत उन्होंने अपने मित्रों की मदद से खट्टे किये। गोकुल में रहकर भी वह क्या करते थे? गायें चराते थे। उन्होंने दावानल निगल लिया, याने क्या किया? देहातों को जलानेवाले लड़ाई-झगड़ों का खात्मा किया। सब लड़कों को इकट्ठा किया। प्रेम बढ़ाया। इस तरह यह श्रीकृष्ण गोपाल कृष्ण हैं। वे तुम्हारे गांव का आदर्श हैं। गोपाल कृष्ण ने गांवों का वैभव बढ़ाया। गांवों की सेवा की,

गांवों पर प्रेम किया, गांव के पशु-पक्षी, गांव की नदी, गांव का गोवर्धन पर्वत—इन सबपर उन्होंने प्रेम किया। गांव ही उनका देवता रहा। आगे चलकर वह द्वारिका के राजा बने। लेकिन फिर भी गोकुल में आते थे, गाय चराते थे, गोबर में हाथ डालते थे, गोशाला बुहारते थे, वनमाला पहनते थे, लड़कों के साथ बंसी बजाते थे, गोपबालों के साथ खेलते थे। 'ब्रजकिशोर' उनका प्यारा नाम था। 'गोपाल' उनका प्यारा नाम था। उन्होंने गोकुल में बड़ा ही आनंद और सुख पैदा किया।

गोकुल में बहुत ही सुख था। ऐसे गोकुल के अन्न के चार दानों के लिए देवता तरसते थे। प्रेम में मस्त गोपालबाल जब भोजन करके दही और 'गोपाल कलेवा' खाकर यमुना के जल में हाथ धोने जाते थे, तब देवता मछली बनकर जूठे अन्नकण खाते थे। उनके स्वर्ग में वह प्रेम था क्या? उन देवताओं को पैसे की कमी नहीं थी। लेकिन उनके पास प्रेम नहीं था। हमारे शहर आपके स्वर्ग हैं न? अरे भाई, वहां प्रेम नहीं है। वहां भोग है, पैसे हैं; परंतु आनंद नहीं है। अपने गांवों को गोकुल के समान बनाओ। तब शहर के नगर-सेठ तुम्हारे गांव की नमक-

रोटी के लिए ललचाकर दौड़ते आयंगे। हमें देहातों को हरा-भरा गोकुल बनाना है—अपनी चीजें आप बनानेवाला, अपना काम आप चलानेवाला, तंदुरुस्त, मेहनती और प्यार-भरा! ईख का कोल्हू चल रहा है, चरखा चल रहा है, धुनिया धुन रहा है, तेल का कोल्हू चूं-चर बोल रहा है, कुंए पर मोट चल रही है, चमार जूता बना रहा है, गोपाल गायें चरा रहे हैं और बंशी बजा रहे हैं--ऐसा गांव बनने दो। अपनी गलती से हमने गांवों को मरघट बनाया। आइए, अब फिर उनको गोकुल बनायें।

कागज एरंडोल का खरीदो। दंतमंजन राख का बनाओ। ब्रुश दतौन का बनाओ। विदेशी कागज की झंडियां और पताकाएं हमें नहीं चाहिए। अपने गांव के पेड़ों के पत्ते लो। उनके तोरण और बंदनवार बनाओ। गांव के पेड़ों का अपमान क्यों करते हो? बाहर से चीजें लाकर बंदनवार लगाओगे तो गांव के पेड़ रूठेंगे। वे समारोह में हाथ बंटाना चाहते हैं। उनके कोपल लाओ। हमारे धार्मिक मंगल-उत्सवों के लिए क्या कागज के तोरण ठीक हैं? आम के शुभ पत्ते चाहिए और घड़ा चाहिए। कलश चाहिए। सो क्या टीन का होगा? वह

पवित्र कलश मिट्टी का ही चाहिए। तुम्हारे गांव के कुम्हार का बनाया हुआ चाहिए। देखो, हमारे पुरखों ने गांव की चीजों की कैसी महिमा बढ़ाई है, वही बात तुम करो। सारा नूर पलट जायगा। इधर-उधर दूसरी ही दुनिया दिखाई देने लगेगी। खुशहाली और आनंद दिखाई देने लगेंगे।

कोई दिनभर फू-फू बीड़ी फूंकते रहते हैं। कहते हैं, "बीड़ियां तो घर की ही हैं। वे बाहर से नहीं आतीं।" अरे भाई, जहर अगर घर का हो तो क्या खा लोगे? घर का जहर खाकर पूरी सोलह आने स्वदेशी मौत को स्वीकार करोगे? जहर चाहे घर का हो या बाहर का, छोड़ना ही है। उसी तरह सभी नशे बुरे हैं। उन सब को छोड़ना चाहिए। वे जानलेवा हैं। शराब के बारे में कहोगे तो पहले महाराष्ट्र में शराब नहीं थी। महाराष्ट्र का पहला गवर्नर एलफिस्टन था। उसने महाराष्ट्र का इतिहास लिखा है। उसमें वह कहता है, "पेशवों के राज में शराब की आमदनी नहीं थी।" लेकिन आज तो गांव-गांव में पियक्कड़ हैं। सरकार उल्टे उन्हें सुभीता कर देती है। लेकिन सरकार सुविधा कर देती है, इस-लिए क्या हम शराब पीयें? हिंदुस्तान में दो मुख्य धर्म

हैं—हिंदू-धर्म और इस्लाम। इन दोनों धर्मों में शराब पीना महान पाप माना गया है। इस्लाम में शराब हराम है। हिंदू-धर्म में शराब की गिनती पांच महापापों में होती है। शराब पीकर आखिर हम क्या साधते



बुरे व्यसन से यह हाल होता है।

हैं ? प्राणों का, कुटुंब का, धन का और इन सबसे प्रिय धर्म का—सभी चीजों का नाश होता है।

बीड़ी और शराब के बाद तीसरा व्यसन है बात-बात में तकरार करना। कृष्ण ने झगड़ों के दावानल निगल लिये। तकरार मत करो और अगर झगड़ा हो

ही जाय तो गांव के चार भले आदमी बैठकर उसका फैसला करो। अदालत का पल्ला मत पकड़ो। अदालतें तुम्हारे गांवों में ही चाहिए। जिस प्रकार और चीजें गांव की ही हों उसी प्रकार न्याय भी गांव का ही हो।



आपसी झगड़े चार भले आदमी बैठकर तय कर लो।

तुम्हारे खेतों में सबकुछ पैदा होता है। लेकिन न्याय तुम्हारे गांव में न पैदा होता हो तो काम कैसे चलेगा? गांव का अन्न, गांव का कपड़ा और गांव का ही न्याय हो। बाहर की कचहरी-अदालत किस काम की? चीजों के लिए जिस तरह हम दूसरों के मुंहदेखा न होंगे उसी तरह

न्याय के लिए भी नहीं होंगे। प्रेम से रहो। दूसरे को थोड़ा-बहुत अधिक मिल जाय, तो भी वह गांव में ही रहेगा, लेकिन दूर चला जाने पर, न हमें मिलेगा, न तुम्हें मिलेगा। सारा भाड़ में जायगा। गांव के ही पंचों में परमेश्वर है। उसकी शरण लो।

भोजन वगैरा बातों का विचार मैं यहां नहीं करता। जीवन निर्मल और विचारमय बनाओ। हरएक काम समझदारी से करो।

: ५ :

चौथी बात साहूकारी की है। तुम ही अपने घर कपास लोढ़कर बीज के लायक बिनोले संभालकर रख लोगे, घर में ही कपड़ा बना लोगे, मूंगफली, अलसी घर में रखकर गांव के कोल्हू से तेल निकलवा लोगे, अदालत-इजलास में जाना बंद कर दोगे, गांव में ही सारे झगड़े तय कर लोगे और मेरे बतलाये ढंग से ब्याह-शादियां करोगे तो साहूकार की जरूरत बहुत कम पड़ेगी। लेकिन फिर भी सभी लोग साहूकार के चंगुल से छुटकारा नहीं पायंगे। कर्जदार फिर भी रहेंगे, पर कर्ज की मात्रा कम हो जायगी।

तुम्हारी कर्जदारी का सवाल असली स्वराज्य के बिना पूरी तरह हल नहीं होगा। स्वराज्य में सबके हिसाब जांचे जायंगे। जिस साहूकार को मूलधन के बराबर ब्याज मिल चुका होगा, उसका कर्ज अदा हो चुका, ऐसा घोषित किया जायगा। जिस साहूकार का मूलधन भी न मिला हो, ब्याज के रूप में भी न मिला हो, उससे समझौता करेंगे। इसी तरह से यह सवाल हल करना होगा। बिना पक्षवाले पंच मुकर्रर करके जांच के बाद जो ठीक होगा, किया जायगा। तबतक ऊपर बताये उपायों से काम लेना चाहिए और धीरे-धीरे साहूकार से दूर रहने की कोशिश करनी चाहिए। परंतु कर्ज चुकाने के फेर में बाल-बच्चों को तंग न करो। उन्हें दूध-घी दो। भरपूर भोजन दो। लड़के सारे समाज के हैं। मैं अपने साहूकार से कहूंगा, "मैं अपने बच्चों को थोड़ा दूध दूं? उन्हें दूध की जरूरत है।" बच्चे जितने मेरे हैं, उतने ही साहूकार के भी हैं। वे सारे देश के हैं। लड़कों को देने में तुम साहूकार को ही देते हो। इसलिए पहले भरपेट खाओ, बाल-बच्चों को खिलाओ। घर की जरूरतें पूरी होने पर कुछ बकाया रहे तो जाकर दे दो। कर्ज तो देना ही है। पर खा-पीकर देना है, भोग-विलास के बाद

नहीं। "कुछ बचा तो ला दूंगा"—ऐसा साहूकार से कह दो।

: ६ :

इस तरह चार बातें बतलाईं। गांव की लक्ष्मी के बाहर जाने के चार दरवाजे बताये और उन्हें बंद करने के उपायों की दिशा भी बताई। अब पांचवीं बात सरकार है। यह सरकार कैसे बंद की जाय? तुम अपनी चीजें बनाने लगो, अपने गांव में बनाने लगो तो सरकार अपने-आप सीधी हो जायगी। कल बुद्धिमान बनकर अगर अपने गावों को अपने पैरों पर खड़ा करोगे तो सरकार अपने-आप नरम हो जायगी। शहर के कारखानों को दूर से ही हाथ जोड़ो। विदेशी चीजों की तो बात ही कौन पूछता है? विदेशी और स्वदेशी कारखानों को तुम गांवों से जो खाने की चीजें पहुंचाते हो, उन्हें बंद करो। आपस मे एकता करो। लड़ना-झगड़ना छोड़ दो। अगर लड़ो भी तो गांव में ही फैसला कर लो। कचहरी-अदालत का मुंह न देखने का संकल्प करो। गांव की ही चीजें, गांव का ही न्याय। अगर ऐसा करोगे तो 'एक पंथ दो काज' होंगे। गरीबी का कष्ट दूर होगा और सरकार

छूमंतर हो जायगी। तुम इस तरह अपनी मदद आप करनेवाले, अच्छी आदतोंवाले, मेहनती और हिलमिलकर रहनेवाले बनो। तब सरकार तुम्हारे हक दिये बिना रह ही नहीं सकती।

तुम लगान के रूप में दस हजार रुपया देते हो। लेकिन कपड़ों के लिए पच्चीस हजार देते हो। अगर कपड़ा गांव में ही बनाने का संकल्प कर लें तो क्या होगा? हरेक को तीन सेर रुई की जरूरत होगी। हर कुटुंब में अगर पांच आदमी हों तो पंद्रह सेर रुई हुई। बोने के लिए जितने बिनौले की जरूरत हो, उतनी बढ़िया कपास से बीनकर घर पर ही लोढ़ो। बढ़िया बिनौले मिलेंगे। जो रुई होगी उसमें से अपने परिवार के कपड़ों के लिए जरूरत के हिसाब से रख लो और बाकी को बेच दो। फी आदमी पक्की तीन सेर रुई के दाम सवा रुपया होंगे।[१] बत्तीस सौ आदमियों को चार-पांच हजार की रुई रखनी होगी। कपड़ा पच्चीस हजार का होगा। उसमें से पांच हजार घटा दीजिए तो बीस हजार गांव में रहेंगे। सरकार लगान के दस हजार ले जायगी, लेकिन

---

[१] यह भाव आज से कई वर्ष पहले का है।

तुम बीस हजार बचाओगे। इसीलिए गांधी कहते हैं कि खादी ही स्वराज्य है। अकेले खादी की बदौलत बीस हजार रुपये गांव में रह गये। कल स्वराज्य मिल जाय तो क्या होगा? लगान आधा याने दस हजार का पांच



"सारी चीजें चरखे से ही निकली हैं"—गांधीजी

हजार हो जायगा, याने तुम्हारे पांच हजार रुपये बचेंगे। लेकिन खादी बरतने से बीस हजार बचेंगे। इसलिए असली स्वराज्य किस चीज में है, यह जानो।

पहले, दूसरे कई राज्य हुए तो भी देहात का यह असली स्वराज्य कभी नष्ट नहीं हुआ था। इसलिए हमें रोटियों के लाले नहीं पड़े, परंतु अंग्रेजी राज्य में यह

खादी का स्वराज्य, देहाती उद्योग-धंधों का स्वराज्य, नष्ट हो गया है। इसीलिए देहात वीरान श्रौर डरावने दिखाई देने लगे। इंगलैंड का मुख्य श्राधार कर या किसान नहीं है, बल्कि करोड़ों रुपयों का व्यापार है। लगान के रूप में उसे दस हजार ही मिलेंगे; लेकिन तुम्हें कपड़ा बेचकर वह बीस हजार ले जायगा। शक्कर, घासलेट वगैरा सैकड़ों ऐसी ही चीजें हैं। इसलिए श्रसली स्वराज्य को पहचानो। मेरे बतलाये उपायों से श्रपने गांव स्वावलंबी, मेहनती, प्रेममय बनाश्रो। इसीमें सबकुछ है।

दिसंबर, १९४१

समाज विकास - माला की पुस्तकें

१. बदरीनाथ
२. जंगल की सैर
३. भीष्म पितामह
४. शिवि और दधीचि
५. विनोबा और भूदान
६. कबीर के बोल
७. गांधीजी का विद्यार्थी-जीवन
८. गंगाजी
९. गौतम बुद्ध
१०. निषाद और शबरी
११. गांव सुखी, हम सुखी
१२. कितनी जमीन ?
१३. ऐसे थे सरदार
१४. चैतन्य महाप्रभु
१५. कहावतों की कहानियां
१६. सरल व्यायाम
१७. द्वारका
१८. बापू की बातें
१९. बाहुबली और नेमिनाथ
२०. तंदुरुस्ती हजार निआमत
२१. बीमारी कैसे दूर करें ?
२२. माटी की मूरत जागी
२३. गिरिधर की कुंडलियां
२४. रहीम के दोहे
२५. गीता-प्रवेशिका
२६. तुलसी - मानस - मोती
२७. दादू की वाणी
२८. नजीर की नज्में
२९. संत तुकाराम
३०. हजरत उमर
३१. बाजीप्रभु देशपांडे
३२. तिरुवल्लुवर
३३. कस्तूरबा गांधी
३४. शहद की खेती
३५. कावेरी
३६. तीर्थराज प्रयाग
३७. तेल की कहानी
३८. हम सुखी कैसे रहें ?
३९. गो-सेवा क्यों ?
४०. कैलाश-मानसरोवर
४१. अच्छा किया या बुरा ?
४२. नरसी महेता
४३. पंढरपुर
४४. ख्वाजा मुईनुद्दीन चिश्ती
४५. संत ज्ञानेश्वर
४६. धरती की कहानी
४७. राजा भोज
४८. ईश्वर का मंदिर
४९. गांधीजी का संसार-प्रवेश
५०. ये थे नेताजी
५१. रामेश्वरम्
५२. कब्रों का मिलाप
५३. रामकृष्ण परमहंस
५४. समर्थ रामदास
५५. मीरा के पद
५६. मिल-जुलकर काम करो
५७. कालापानी
५८. पावभर आटा
५९. सवेरे की रोशनी
६०. भगवान के प्यारे
६१. हारूं-अल-रशीद
६२. तीर्थंकर महावीर
६३. हमारे पड़ोसी
६४. आकाश की बातें
६५. सच्चा तीरथ
६६. हाजिर जवाबी
६७. सिंहासन-बत्तीसी भाग १
६८. सिंहासन-बत्तीसी भाग २
६९. नेहरूजी का विद्यार्थी - जीवन
७०. सूरजराज
७१. नाना फड़नवीस
७२. गुरु नानक

मूल्य प्रत्येक का छः आना

सैंतीस नये पैसे